ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(2): 516-521
www.allresearchjournal.com
Received: 26-12-2016
Accepted: 31-01-2017

डॉ. अंजना रानी
एसोसिएट प्रोफ़ेसर,
दर्शनशास्त्र विभाग, श्री गोविंद गुरु राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा, राजस्थान, भारत

Correspondence
डॉ. अंजना रानी
एसोसिएट प्रोफ़ेसर,
दर्शनशास्त्र विभाग, श्री गोविंद गुरु राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा, राजस्थान, भारत

वैदिक शिक्षा बनाम आधुनिक शिक्षा

डॉ. अंजना रानी

सारांश
शिक्षा जिस प्रकार की होगी,मानव का जीवन भी उसी प्रकार का होगा। फल बता देता है कि वृक्ष किस प्रकार का है-आम का या बबूल का। आज शिक्षा संस्थान डिग्री बांटने वाले केंद्र मात्र बनकर रह गए हैं, जिससे बेरोजगार युवा निकल रहे हैं। ऐसे में आधुनिक शिक्षा प्रणाली पर विचार किया जाना चाहिए जो कौशल और चरित्र पैदा करने में असफल मानी जा रही है। ऐसी परिस्थिति में प्राचीन वैदिक शिक्षा प्रणाली को गहराई से देखने की आवश्यकता है जिससे चरित्रवान और गुणवान पीढ़ी ने निकल कर भारत को विश्वगुरु के पद पर प्रतिष्ठित किया।

कूट शब्द : विद्या, शिक्षा, शिष्य-गुरु, शिक्षक-छात्र।

प्रस्तावना
हमारी आधुनिक शिक्षा प्रणाली आज चिंता एवं चिंतन का विषय बनी हुई है। आधुनिक शिक्षा से इतर जब वैदिक शिक्षा की ओर हमारा ध्यान जाता है तो आकाश में घिरी हुई काली बदलियों के बीच से शुभ्र रेखा वाली कोई बिजली कौंध जाती है। वैसे तो शिक्षा को मानव निर्माण का सबसे सशक्त उपाय बताया जाता है किंतु आज विद्यालयों और महाविद्यालयों में जिस प्रकार का उपद्रव देखने को मिलता है, उससे निराशा ही हाथ लगती है। शिक्षा के प्रांगण में प्रोफेसर सबरवाल की हत्या और वह भी छात्र नेताओं द्वारा; यह बताती है कि हमारी शिक्षा की दशा और दिशा ठीक नहीं है। एक तरफ बढ़ती बेरोजगारी और दूसरी तरफ खत्म होते चारित्रिक मूल्य स्पष्ट संकेत कर रहे हैं कि इस आधुनिक शिक्षा का आधार गलत है।
ऐसी परिस्थिति में हमें एक बार प्राचीन वैदिक शिक्षा प्रणाली पर विहंगम दृष्टि डालनी चाहिए कि क्या कोई समाधान वहां हमारी आज की शिक्षा समस्या का है? आखिर कौन सी विशेषता थी, उस शिक्षा प्रणाली में जिसके कारण भारत विश्व गुरु के पद पर प्रतिष्ठित था।

गंभीर गवेषणा के उपरांत कुछ बिंदु बहुत महत्व के लगते हैं-

1. वैदिक काल में विद्या का उद्देश्य मुक्ति प्रदान करना था-"सा विद्या या विमुक्तये"[1]
2. प्राचीन काल में विद्या व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की आवश्यकता के अनुसार दी जाती थी और ली जाती थी।
3. प्राचीन प्रणाली में शिक्षा प्रवृत्ति और योग्यता के मापदंड पर ही दी जाती थी।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में इन महत्वपूर्ण बातों को गौण कर दिया गया है। शिक्षा पूर्णरूप से व्यवसाय बन गई है। जो मूल्य चुकाने को तैयार हैं, उनके लिए आवश्यकता, प्रवृत्ति और योग्यता का कोई मापदंड नहीं रखा जाता है। निरुक्त में एकत्र कहा गया है कि विद्या ब्राह्मण के पास जाकर बोली कि मेरी रक्षा करो। मैं तुम्हारी निधि हूं, मुझसे ही तुम धनी हो। अतः जिसमें दूसरों के दोषान्वेषण की प्रवृत्ति हो और कुटिलता हो तथा इंद्रियों एवं मन पर नियंत्रण नहीं हो, ऐसे व्यक्ति को मुझे मत दो-

विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेअहमस्मि असूयकायानृजवेअयताय न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम।।[2]

आज दिन प्रतिदिन नए-नए विद्यालय और महाविद्यालय खोले जा रहे हैं।डॉक्टर, इंजीनियर बनने और बनाने के लिए कोटा जैसे अनेक शहरों में शिक्षा को उद्योग का रूप दे दिया गया है, जहां योग्यता और क्षमता जांच के लिए कोई रणनीति नहीं बनाई गई है। आज की पीढ़ी भेड़ चाल की शिकार हो गई है। जिसका भी विज्ञापन ज्यादा कर दिया जाता है, उसका बाजार मूल्य सबसे ज्यादा हो जाता है। इसी कारण से एक तरफ डिग्री करोड़ों युवाओं को बांटी जा रही है तो दूसरी तरफ शिक्षित बेरोजगारों की संख्या करोड़ों में पहुंच चुकी हैं।
प्राचीन वैदिक शिक्षा प्रणाली में शिक्षा सबको नहीं दी जाती थी। जो शिष्यत्व की कसौटी पर योग्य साबित होता था, उसे ही शिक्षा दी जाती थी। मनीषियों का विचार था कि हंस ही सरस्वती का वाहन बन सकते हैं,काग नहीं। गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं कि-

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति।।[3]

अर्थात् श्रद्धावान्, तत्पर और जितेन्द्रिय पुरुष ज्ञान प्राप्त करता है। ज्ञान को प्राप्त करके शीघ्र ही वह परम शान्ति को प्राप्त होता है।।
उच्च शिक्षा के लिए उस समय बहुत ऊंचा मापदंड गुरु निर्धारित करता था। इसीलिए उस समय संख्या बहुत विरल थी किंतु गुणवत्ता बहुत अच्छी थी। तभी वेद लिखने के साधन न होने पर भी वे ज्यों के त्यों सुरक्षित रहे। उस ज्ञान को प्राप्त करने का उपाय अर्जुन को बताते हुए कृष्ण कहते हैं-

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः।।[4]

अर्थात् उस तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी ज्ञानी महापुरुषोंके पास जाकर समझ। उनको साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणाम करनेसे, उनकी सेवा करनेसे और सरलतापूर्वक प्रश्न करनेसे वे तत्त्वदर्शी ज्ञानी महापुरुष तुझे उस तत्त्वज्ञानका उपदेश देंगे।
प्राचीन काल में ब्राह्मण को शास्त्रविद्या,क्षत्रिय को शस्त्रविद्या, वैश्य को व्यवसायविद्या और शूद्र को शिल्पविद्या प्रमुखता से दी जाती थी। इससे समाज में एक प्रकार का सामंजस्य और संतुलन बना रहा क्योंकि सबको एक दूसरे की आवश्यकता थी।
आज शिक्षा की स्थिति यह है कि भारत में एक तरफ निरक्षर लोगों की संख्या 35 करोड़ से ऊपर हैं तो दूसरी तरफ शिक्षित बेरोजगारों की संख्या भी 15 करोड़ के लगभग है। यह आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि आज की शिक्षा प्रणाली में असफल तो असफल है ही, जो डिग्री लेने में सफल हो जा रहे हैं, उनका विषाद दोगुना हो जाता है; क्योंकि एक तरफ उसे मुख्य उद्देश्य रोजगार की प्राप्ति नहीं होती है और दूसरी तरफ वह घर के परंपरागत काम का भी नहीं रहता। आज का तथाकथित

[1] श्री विष्णु पुराणे प्रथमस्कंधे एकोनविंशोअध्याय:
2 निरुक्त 2/4/1
3 गीता 4/39
4 गीता 4/34

शिक्षित वर्ग मां-बाप-शिक्षक-बुजुर्ग के प्रति अनादर से भर गया है तो दूसरी तरफ उसे व्यवस्था का या कानून का डर भी नहीं रहा।शिक्षित युवा वर्ग की समस्या आज राष्ट्रीय चरित्र की समस्या बन चुकी है।

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली और आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली के मध्य गंभीर गवेषणा और विवेचना के उपरांत कुछ अंतर स्पष्ट रूप से उभरे हैं जो निम्नलिखित हैं-

1. प्राचीन शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को प्रकृति से जोड़ती थी जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली ने उसे प्रकृति से तोड़ दिया। प्रकृति की गोद में ही गुरुकुल बसा होता था जहां के रमणीय वातावरण से विद्यार्थी का इतना साहचर्य होता था कि पशु-पंछी, पेड़-पौधे उसे बंधु बांधव से प्रतीत होते थे। प्रकृति की विभिन्न शक्तियों को हमारे ऋषियों ने माता- पिता ही नहीं बल्कि देव तथा देवी के रूप में भी आराधना की -

माता भूमि: पुत्रोअहं पृथिव्या:
पर्जन्य: पिता स उ न पिपतु।।[5]

वैदिक वांग्मय में प्रकृति के प्रति प्रतिबद्धता को हम सर्वाधिक सशक्त रूप में 'ऋत' के संबंध में पा सकते हैं। वैदिक युग में 'ऋत' सत्य का ऐसा रूप है जो नैतिक एवं प्राकृतिक जगत में समानांतर रूप से प्रवाहित है। मानव की सत्यनिष्ठा प्रज्ञा को 'ऋतंभरा' कहा गया है तथा प्रकृति चक्र की विधायिका विभाजिका को 'ऋतु' की संज्ञा दी गई है। यहां पर आकर नैतिक व प्राकृतिक जीवन में पूर्ण तादात्म्य हो जाता है।[6]

तभी कालिदास की शकुंतला वृक्षों को बिना सींचे स्वयं जल नहीं पीती थी और श्रृंगारप्रिया होने पर भी अपने बालों में लगाने के लिए फूलों को नहीं तोड़ती थी-

पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या ,
नादत्ते प्रिय मण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम् ।
आद्ये वः कुसुमुप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः,[7]

इसी प्रकार से अपभ्रंश कवि स्वयंभू देव वर्णन करते हैं-

"वण-कुक्कड कउ-क्कु आयरन्ति
अण्णु वि क्लावि के-क्कड चवन्ति
पियमाहवियउ को -क्कउ लवन्ति
क--का वप्पीह समुल्लवन्ति।।"[8]

अर्थात् वह वटवृक्ष मानव शिक्षक रूप धारण कर पंक्षी रूपी शिष्यों को सुंदर स्वर और व्यंजन के पाठ पढ़ा रहा था। कौवे क- का कर रहे थे, बाउल पक्षी कि - की बोल रहे थे ,मुर्गे कु- कू बोल रहे थे ,मयूर के - कै कर रहे थे, कोयल को -कौ और पपीहा कं-क: का उच्चारण कर रहे थे।"

आस्था चैनल पर ओशोधारा कार्यक्रम में ओशो प्रिया जी एक दिन देववाणी ध्यान सिखा रही थीं।उसमें उन्होंने देववाणी का अर्थ बताया मूलवाणी। क्योंकि देव शब्द "दिव्' धातु से बना है जिसका अर्थ होता है 'चमकना' यानी जो प्रकाशित होता है ,स्फुटित होता है। पशु पक्षियों की वाणी इस अर्थ में मूलवाणी है जो स्वभावत: स्फुटित होती है। जबकि देववाणी का अर्थ इसके विपरीत किया जाता है -'विशिष्ट लोगों की वाणी'। इस तरह वे लोगों को प्रकृति के शांत वातावरण में गूंजने वाले पशु-पक्षियों की वाणी पर ध्यान करा रही थीं। इससे सर्वत्र चेतनता का अनुभव होने लगता है और व्यक्ति अधिक संवेदनशील बन जाता है। वह दूसरों के सुख-दुख से तादात्म्य करने लगता है।

जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में शिक्षा शहर के कोलाहलपूर्ण वातावरण में ऊंची कंक्रीट के भवनों में दी जा रही है,जिससे विद्यार्थी का हृदय भी पत्थरनुमा बनता जा रहा है। वह प्रकृति से टूटकर संस्कृति को विकसित नहीं कर पाया उलटे विकृति का शिकार हो गया। कोलाहलपूर्ण परिवेश के ध्वनि प्रदूषण से उसे पशु पक्षियों की आवाज सुनाई पड़नी तो बंद ही हो गई अब तो मानव की चीत्कार भी सुनाई नहीं पड़ती। वह दिनों दिन अपने परिवेश और प्रकृति के प्रति संवेदनहीन होता जा रहा है। अब कोर्स में "पर्यावरण" विषय जोड़कर पेड़

5 अथर्ववेद 12/1/2
6 भारतीय शिक्षा दर्शन- सरयू प्रसाद चौबे, दि मैकमिलन क.ऑफ इंडिया दिल्ली 1975
7 अभिज्ञानशाकुंतलम् 4/9
8 अपभ्रंश- स्वयंभूदेव (पउमचरिड27/11/5)

पौधों के बारे में शाब्दिक शिक्षा दी जा रही है जो और भी पेड़ों को काटने का कारण बन रही है।

2. प्राचीन शिक्षा प्रणाली विद्यार्थी को अनुभव देती थी जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली सिर्फ सूचना देती है। उपनिषदों में एक कथा आई है कि एक गुरु ने विद्यार्थी को पहला पाठ पढ़ाया -'सत्यं वद'और उसे कहा कि **5** वर्षो के बाद उसकी परीक्षा ली जाएगी। वह विद्यार्थी थोड़ा चकित था कि यह वाक्य तो अभी याद हो गया, फिर **5** वर्ष तक क्यों इंतजार करना पड़े? लेकिन गुरु ने ठीक **5** वर्षों के बाद उसे कहा कि -जाओ ,तलाब से स्नान करके आ जाओ।आज तुम्हारी परीक्षा होगी।वह विद्यार्थी जब तालाब पर स्नान करने गया तो कुछ युवतियां वहां स्नान कर रही थीं, जिन्हें वह देखने लगा और उसे देर हो गई। जब गुरु के पास लौट कर आया तो उसने देर होने का कारण बताया कि वह कीचड़ में फिसल कर गिर पड़ा था , अतः दुबारा स्नान करने लगा ;इस कारण से देर हो गई।त्रिकालद्रष्टा गुरु ने कहा कि -जा, तू परीक्षा में फेल हुआ।फिर **5** वर्ष तक सत्य की साधना करके आना, ऐसी शिक्षा से जीवन रूपांतरित होता था। डॉ. कृष्ण कांत पाठक लिखते हैं-"शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य शरीर एवं आत्मा में समस्त सुंदरता एवं पूर्णता का विकास करना है।"[9] डॉ. भास्कर मिश्र 'वैदिक शिक्षा पद्धति' नामक पुस्तक में लिखते हैं -"शिक्षा ही जीवन है जीवन ही शिक्षा है।"[10] प्राचीन शिक्षा में गुरु साक्षात सत्य बनकर सत्य बोलने की शिक्षा दिया करता था और शिष्य भी इसे सिर्फ अपने मस्तिष्क में ही नहीं बल्कि अपने हृदय और जीवन में उतारकर परीक्षा में उत्तीर्ण हो पाता था।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में बहुत सारी बातें दिमाग में एक साथ जबरदस्ती ठूंस दी जाती हैं । वे सारे विचार मस्तिष्क को विक्षिप्त कर देते हैं क्योंकि वे परस्पर विरोधी भी होते हैं। तभी तो वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हमला करने वाले आतंकियों का मास्टरमाइंड मोहम्मद अता खुदा की इबादत करके बेगुनाह इंसानों के खात्मे को जाते हुए जन्नत की कामना करता है। 'सत्यमेव जयते' के आदर्श वाक्य वाले देश में असत्य बहुत बोला जाता है। आज पढ़ने लिखने के बाद इंसान सिर्फ चालाकियां सीखकर आ रहा है। वह दूसरों को ही नहीं, स्वयं को भी धोखा देने में कुशल हो गया है।तभी तो भ्रष्टाचार सर्वत्र पनप रहा है।

3. प्राचीन शिक्षा प्रणाली प्रेम पर आधारित थी जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली प्रतियोगिता पर आधारित है।

"विद्या ददाति विनयं" के उद्देश्य को लेकर चलने वाली प्राचीन वैदिक शिक्षा प्रणाली को छोड़कर आज की आधुनिक शिक्षा प्रणाली "विद्या ददाति पदम्" के उद्देश्य को लेकर आगे बढ़ रही हैं। संदीपनी ऋषि के आश्रम में दीन विप्र सुदामा और राजपुत्र कृष्ण दोनों पढ़ते थे। गुरु का प्रेम दोनों पर समान रूप से बरसता था। शिष्यों में भी इसी कारण परस्पर प्रेम पल्लवित पुष्पित होता था।

गीता में कहा गया है-

"विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनी
शुनिचैवश्वपाके च पंडिता: समदर्शिनः।।"[11]

अर्थात् विद्या विनय संपन्न व्यक्ति समदर्शी हो जाता है। उसे ब्राम्हण में,गाय में,हाथी में,कुत्ते में और चांडाल में कोई अंतर नहीं दिखता।

प्रेम की रेखा वर्तुलाकार होती है, जिसमें एक दृष्टि से कोई आगे हैं तो दूसरी दृष्टि से पीछे। और प्रेम में लेने की नहीं देने की भावना प्रबल होती है। इसी कारण गुरु वरतंतु ने जब अपने शिष्य कौत्स को सारी विद्याएं सीखा दी तो समावर्तन संस्कार के अवसर पर शिष्य ने गुरु-दक्षिणा देने की अपनी भावना व्यक्ति की। गुरु ने कहा कि तुमने मेरी सारी विद्याएं सीख लीं, इससे बड़ी गुरूदक्षिणा और क्या हो सकती है! ऐसे प्रेमपूर्ण और विनयशील परिवेश में पला हुआ विद्यार्थी समाज और राष्ट्र को देने की भावना से पूर्ण होकर गुरुकुल से निकलता था।

आज की शिक्षा प्रणाली प्रतियोगिता को बढ़ावा देती है। प्रतियोगिता की रेखा सीधी होती है जिसमें यदि कोई प्रथम है तो दूसरा उसके समकक्ष नहीं हो सकता। जो विद्यार्थी इस प्रतियोगिता में प्रथम आता है, उसमें

9 विश्व चिंतन के चार अध्याय-डॉ. कृष्णकांत पाठक
10 वैदिक शिक्षा पद्धति- डॉ.भास्कर मिश्र
11 गीता 5/18

सुपीरियरिटी कंपलेक्स घर कर जाता है और जो असफल विद्यार्थी हैं, वे इंफेरियरिटी कंपलेक्स से भर जाते हैं। जबकि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होता है-- कंप्लेक्स-मुक्त-मनुष्य का निर्माण। प्रतियोगिता के कारण अहंकारी और अविनयी विद्यार्थी सामने आ रहे हैं जो न शिक्षक की कद्र करते हैं और न मां बाप की। तभी तो शिक्षालय विवाद के केंद्र बन गए हैं और समाज में वृद्धाश्रम बढ़ते जा रहे हैं।

4. वैदिक शिक्षा प्रणाली में गुरु शिष्य का संबंध आत्मिक होता था जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में यह संबंध व्यावसायिक हो गया है। आश्रम में गुरु के साथ विद्यार्थी अहर्निश रहता था। वह सिर्फ गुरु के वचन को ही नहीं, बल्कि जीवन को भी ग्रहण करता था। मन, वचन,कर्म से एकत्व को प्राप्त हुआ गुरु का सान्निध्य शिष्य में आमूलचूल परिवर्तन ला देता था। हितोपदेश में मन-वचन-कर्म की एकता वाले को ही महात्मा की संज्ञा दी गई है-

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्
मनस्यन्यद् वचस्यन्यद् कर्मन्यन्यद् दुरात्मनाम।।[12]

गुरु अपने से आगे शिष्य को निकलता हुआ देखना चाहता था। मनीषियों द्वारा कहा गया है -

नरः सर्वत्र विजयमिच्छेत्,
पुत्रात् शिष्यात् च पराजयम्।

अर्थात् मानव सर्वत्र विजय की कामना करता है किंतु पुत्र और शिष्य से पराजित होना चाहता है।

आज की शिक्षा प्रणाली के बारे में कहा जाता है कि" शिक्षक के नोट्स से छात्र की नोटबुक में जो बात पहुंच जाए किंतु दोनों में से किसी के जीवन में नहीं पहुंचे, वही शिक्षा है ।" उड़ीसा की एक मेधावी छात्रा ने मेरिट में पीछे धकेल किए जाने पर आत्महत्या कर ली उसने सुसाइड नोट में लिखा था कि ट्यूशन पर नहीं जाने के कारण संबंधित शिक्षक ने यह साजिश की। ऐसे शिक्षकों को लक्ष्य करके कालिदास ने लिखा था-

लब्धास्पदो अस्मि विवादभीरस्तितिक्षमानस्य परेण निंदां
यस्यागमःकेवल जीविकायै तं ज्ञानपण्यं वणिजं वदन्ति।[13]

5. प्राचीन वैदिक शिक्षा प्रणाली सुफलता को महत्व देती थी जबकि आधुनिक शिक्षा प्रणाली सिर्फ सफलता को महत्व देती है। भारतीय संस्कृति की दृष्टि में मात्र सफलता कोई मूल्य हो ही नहीं सकती। क्योंकि एक बुरे कार्य में सफल होने से एक शुभ कार्य में असफल होना भी ज्यादा मूल्यवान है। प्रतिस्पर्धा में सफल होने के बजाय प्रेम में असफल होना कहीं ज्यादा शुभ है। धन में सफल होने के बजाय धर्म में असफल होना कहीं ज्यादा गौरव की बात है। सत्य के लिए हार जाना भी जीत है क्योंकि सत्य के लिए हारने के साहस में ही आत्मा सबल होती है। श्री कृष्ण ने महाभारत युद्ध के पहले कर्ण को बहुत समझाया कि तू कुंती का पुत्र हैं ,पांडवों का ज्येष्ठ है ,दुर्योधन की मित्रता छोड़कर पांडव ख़ेमे में आ जाओ। फिर भी कर्ण ने एक मूल्य "मैत्री" की खातिर असफलता चुन लिया। इसके कारण कर्ण श्रीकृष्ण की नजरों में भी ऊपर उठ गया और इतिहास भी उसे बहुत आदर के साथ याद करता है।

अटल बिहारी वाजपेई की सरकार संसद में एक मत से हार गई लेकिन खरीद-फरोख्त से दूर रहकर उन्होंने लोगों का दिल जीत लिया।

दरअसल हमारी आज की शिक्षा प्रणाली मैकाले की शिक्षा नीति पर आधारित है जिसका बहुत स्पष्ट उद्देश्य था कि अंग्रेजी राज के लिए ऐसे बाबूओं को तैयार किया जाए जो तन से भले ही भारतीय हों लेकिन मन से अंग्रेज हों। स्वतंत्रता के बाद हमारी शिक्षा हमारी सांस्कृतिक परंपराओं और परिवेश के अनुकूल होनी चाहिए थी लेकिन फिर वही अंग्रेजियत संस्कृति वालों ने ऐसी शिक्षा नीति बनाई जिसमें बच्चा अपने मूल भाषा,संस्कृति और परिवेश से कट जाता है। अपनी भाषा अपनी संस्कृति को बढ़ाने वाली शिक्षा प्रणाली की आज जरूरत है।

इसके लिए सरकारें भले ही बहुत ज्यादा प्रयास न कर रही हों, लेकिन कुछ लोग ऐसे अवश्य हैं जो ऐसा प्रयास चला रहे हैं। 'प्रथम प्रवक्ता' अगस्त द्वितीय 2004 के पाक्षिक पत्रिका में "Society for integrated development of Himalayas"(SIDH) के बारे में विस्तार से खबर आई जिसके अनुसार उत्तरांचल के

12 हितोपदेश

13 मालविकाग्निमित्रम्-कालिदास

पहाड़ी गांव में परिवेश, प्रकृति और संस्कृति आधारित शिक्षा के कार्यक्रम सिद्ध चला रही है। इसके परिणामस्वरूप अपने परिवेश के प्राकृतिक संसाधनों के ज्ञान से युवा पीढ़ी जड़ी-बूटियों का निर्यात भी कर रही हैं और अपने सामाजिक मूल्य और मान्यताओं का पालन करते हुए सुखी और संतुष्ट जीवन भी जी रही हैं।

जब तक अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और अपने परिवेश से जुड़ने वाली प्राचीन वैदिक शिक्षा व्यवस्था अधिकाधिक जगहों पर नहीं लाई जाती तब तक भारत प्राकृतिक और सांस्कृतिक रूप से धनी होने के बावजूद दरिद्र बना रहेगा।

सन्दर्भ

1. श्री विष्णु पुराणे प्रथमस्कंधे एकोनविंशोअध्याय:
2. निरुक्त 2/4/1
3. गीता 4/39
4. गीता 4/34
5. अथर्ववेद 12/1/2
6. भारतीय शिक्षा दर्शन- सरयू प्रसाद चौबे, दि मैकमिलन क.ऑफ इंडिया दिल्ली 1975
7. अभिज्ञानशाकुंतलम् 4/9
8. अपभ्रंश- स्वयंभूदेव (पउमचरिड27/11/5)
9. विश्व चिंतन के चार अध्याय-डॉ. कृष्णकांत पाठक
10. वैदिक शिक्षा पद्धति- डॉ.भास्कर मिश्र
11. गीता 5/18
12. हितोपदेश
13. मालविकाग्निमित्रम्-कालिदास